भगतसिंह (1931)

क्रान्तिकारी कार्यक्रम का मसविदा

'नौजवान राजनीतिक कार्यकर्ताओं के नाम पत्र ' शीर्षक के साथ मिले इस दस्तावेज के कई प्रारूप और हिन्दी अनुवाद उपलब्ध हैं, यह इसके सम्पूर्ण रूप का अंग्रेजी अनुवाद है। 'कौम के नाम सन्देश' के रूप में इसका एक संक्षिप्त रूप भी इस अनुभाग में संकलित है। लाहौर के पीपुल्ज़ में 29 जुलाई, 1931 और इलाहाबाद के अभ्युदय में 8 मई, 1931 के अंक में इसके कुछ अंश प्रकाशित हुए थे। यह दस्तावेज अंग्रेज सरकार की एक गुप्त पुस्तक 'बंगाल में संयुक्त मोर्चा आन्दोलन की प्रगति पर नोट' से प्राप्त हुआ, जिसका लेखक एक सी आई डी अधिकारी सी ई एस फेयरवेदर था और जो उसने 1936 में लिखी थी । उसके अनुसार यह लेख भगतसिंह द्वारा लिखा गया था और 3 अक्तूबर, 1931को श्रीमती विमला प्रभादेवी के घर से तलाशी में बरामद हुआ था। यह पत्र/ लेख भगत सिंह ने फाँसी से करीब डेढ़-दो महीने पहले, सम्भवत: 2 फरवरी, 1931, को जेल से ही लिखा था।

नौजवान राजनीतिक कार्यकर्ताओं के नाम पत्र

प्रिय साथियो

इस समय हमारा आन्दोलन अत्यन्त महत्त्वपूर्ण दौर से गुजर रहा है। एक साल के कड़े संघर्ष के बाद गोलमेज सम्मेलन ने हमारे सामने, संवैधानिक सुधारों-सम्बन्धी कुछ निश्चित बातें प्रस्तुत की हैं और कांग्रेसी नेताओं से कहा गया है कि वर्तमान परिस्थितियों में अपना आन्दोलन वापस लेकर इसमें मदद करें। इस बात का हमारे लिए कोई महत्त्व नहीं है कि वे आन्दोलन समाप्त करने का निर्णय करते हैं या नहीं करते। यह तो निश्चित है कि वर्तमान आन्दोलन का अन्त किसी न किसी तरह के समझौते के रूप में होगा। यह बात अगल है कि समझौता जल्द होता है या देर से। वास्तव में समझौता कोई घटिया या घृणित वस्तु नहीं है, जैसाकि प्रायः समझा जाता है। राजनीतिक संघर्षों का यह एक जरूरी दाँव पेंच है। कोई भी राष्ट्र जो अत्याचारी शासकों के खिलाफ उठ खड़ा होता है, शुरू में अवश्य असफल रहता है। संघर्ष के बीच में समझौते द्वारा कुछ आधे-अधूरे सुधार हासिल करता है और सिर्फ अन्तिम दौर में ही – जब सभी शक्तियाँ और साधन पूरी तरह संगठित हो जाते हैं – शासक वर्ग को नष्ट करने के लिए आखिरी जोरदार हमला किया जा सकता है। लेकिन यह भी सम्भव है कि तब भी असफलता हाथ लगे और किसी प्रकार का समझौता अनिवार्य हो जाये। रूस के उदाहरण से यह बात अच्छी तरह स्पष्ट की जा सकती है।

1905 में जब रूस में क्रान्तिकारी आन्दोलन शुरू हुआ तो राजनीतिक नेताओं को बड़ी आशाएँ थीं। लेनिन तब विदेश से, जहाँ वे शरण लिये हुए थे, लौट आये थे और संघर्ष

का नेतृत्व कर रहे थे। लोग उन्हें यह बताने पहुँचे कि दर्जनों जागीरदार मार दिये गये हैं और बीसियों महल जला दिये गये हैं। लेनिन ने उत्तर में कहा कि लौटकर 1200 जागीरदार मारो और इतने ही महल व हवेलियाँ जला दो, क्योंकि यदि असफल रहे तो भी इसका कुछ मतलब होगा। ड्यूमा (रूसी संसद) की स्थापना हुई। अब लेनिन ने ड्यूमा में हिस्सा लेने की वकालत की। यह 1907 की बात है, जबकि 1906 में वे पहली ड्यूमा में हिस्सा लेने के खिलाफ थे, बावजूद इसके कि उस ड्यूमा में काम करने का अवसर अधिक था और इस ड्यूमा के अधिकार अत्यन्त सीमित कर दिये गये थे। वह फैसला बदली हुई परिस्थितियों के कारण था। अब प्रतिक्रियावादी शक्तियाँ बहुत बढ़ रही थीं और लेनिन ड्यूमा के मंच को समाजवादी विचारों पर बहस के लिए इस्तेमाल करना चाहते थे।

पुनः 1917 की क्रान्ति के बाद, जब बोल्शेविक ब्रेश्त-लितोव्स्क सन्धि पर हस्ताक्षर करने के लिए विवश हुए तो सिवाय लेनिन के बाकी सभी इसका विरोध कर रहे थे। लेकिन लेनिन ने कहा, "शान्ति, शान्ति और पुनः शान्ति! किसी भी कीमत पर शान्ति होनी चाहिए।" जब कुछ बोल्शेविक-विरोधियों ने इस सन्धि के लिए लेनिन की निन्दा की तो उन्होंने स्पष्ट कहा कि "बोल्शेविक जर्मन हमले का सामना करने की सामर्थ्य नहीं रखते, इसीलिए सम्पूर्ण तबाही की जगह सन्धि को प्राथमिकता दी गयी है।"

जो बात मैं स्पष्ट करना चाहता हूँ वह यह है कि समझौता एक ऐसा जरूरी हथियार है, जिसे संघर्ष के विकास के साथ ही साथ इस्तेमाल करना जरूरी बन जाता है, लेकिन जिस चीज का हमेशा ध्यान रहना चाहिए वह है आन्दोलन का उद्देश्य। जिन उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए हम संघर्ष कर रहे हैं, उनके बारे में हमें पूरी तरह स्पष्ट होना चाहिए। इस बात से अपने आन्दोलन की उपलब्धियों, सफलताओं व असफलताओं को आँकने में हमें सहायता मिलती है और अगला कार्यक्रम बनाने व तय करने में भी। तिलक की नीति – उनके उद्देश्यों के बावजूद – यानी उनके दाँव-पेंच बहुत अच्छे थे। आप अपने शत्रु से सोलह आना पाने के लिए लड़ रहे हैं। आपको एक आना मिलता है, उसे जेब में डालिए और बाकी के लिए संघर्ष जारी रखिए। नर्म दल के लोगों में जिस चीज की कमी हम देखते हैं वह उनके आदर्श की है। वे इकन्नी के लिए लड़ते हैं और इसलिए उन्हें मिल ही कुछ नहीं सकता। क्रान्तिकारियों को यह बात हमेशा अपने मन में रखनी चाहिए कि वे आमूल परिवर्तन लाने वाली क्रान्ति के लिए लड़ रहे हैं। उन्हें ताकत की बागडोर पूरी तरह अपने हाथों में लेनी है। समझौतों से इसलिए डर महसूस होता है, क्योंकि प्रतिक्रियावादी शक्तियाँ समझौते के बाद क्रान्तिकारी शक्तियों को समाप्त करवाने की कोशिशें करती हैं लेकिन समझदार और बहादुर क्रान्तिकारी नेता, आन्दोलन को ऐसे गड्डों में गिरने से बचा सकते हैं। हमें ऐसे समय और ऐसे मोड़ पर वास्तविक मुद्दों और विशेषतः उद्देश्यों-सम्बन्धी कुछ गड़बड़ नहीं होने देनी चाहिए। इंग्लैण्ड की लेबर पार्टी ने वास्तविक संघर्ष से धोखा किया है और वे (उसके नेता) सिर्फ कुटिल साम्राज्यवादी बनकर रह गये हैं।

मेरे विचार में इन रंगे हुए साम्राज्यवादी लेबर नेताओं से कट्टर प्रतिक्रियावादी हमारे लिए बेहतर हैं। दाँव-पेंचों और रणनीति-सम्बन्धी लेनिन के जीवन और लेखन पर हमें विचार करना चाहिए। समझौते के मामले पर 'वामपंथी कम्युनिज्म' में उनके स्पष्ट

विचार मिलते हैं।

कांग्रेस का उद्देश्य क्या है?

मैंने कहा है कि वर्तमान आन्दोलन किसी न किसी समझौते या पूर्ण असफलता में समाप्त होगा।

मैंने यह इसलिए कहा है क्योंकि मेरी राय में इस समय वास्तविक क्रान्तिकारी ताकतें मैदान में नहीं हैं। यह संघर्ष मध्यवर्गीय दुकानदारों और चन्द पूँजीपतियों के बलबूते किया जा रहा है। यह दोनों वर्ग, विशेषतः पूँजीपति, अपनी सम्पत्ति या मिल्कियत खतरे में डालने की जुर्रत नहीं कर सकते। वास्तविक क्रान्तिकारी सेनाएँ तो गाँवों और कारखानों में हैं – किसान और मजदूर। लेकिन हमारे 'बुर्जुआ' नेताओं में उन्हें साथ लेने की हिम्मत नहीं है, न ही वे ऐसी हिम्मत कर सकते हैं। यह सोये हुए सिंह यदि एक बार गहरी नींद से जग गये तो वे हमारे नेताओं की लक्ष्य-पूर्ति के बाद भी रुकने वाले नहीं हैं। 1920 में अहमदाबाद के मजदूरों के साथ अपने प्रथम अनुभव के बाद महात्मा गांधी ने कहा था, "हमें मजदूरों के साथ साँठ-गाँठ नहीं करना चाहिए। कारखानों के सर्वहारा वर्ग का राजनीतिक हितों के लिए इस्तेमाल करना खतरनाक है।" (मई, 1921 के 'दि टाइम्स') से। तब से उन्होंने इस वर्ग को साथ लेने का कष्ट नहीं उठाया। यही हाल किसानों के साथ है। 1922 का बारदोली-सत्याग्रह पूरी तरह यह स्पष्ट करता है कि नेताओं ने जब किसान वर्ग के उस विद्रोह को देखा, जिसे न सिर्फ विदेशी राष्ट्र के प्ररभुत्व से ही मुक्ति हासिल करनी थी वरन देशी जमींदारों की जंजीरें भी तोड़ देनी थीं, तो कितना खतरा महसूस किया था।

यही कारण है कि हमारे नेता किसानों के आगे झुकने की जगह अंग्रेजों के आगे घुटने टेकना पसन्द करते हैं। पण्डित जवाहर लाल को छोड़ दें तो क्या आप किसी नेता का नाम ले सकते हैं, जिसने मजदूरों या किसानों को संगठित करने की कोशिश की हो। नहीं, वे खतरा मोल नहीं लेंगे। यही तो उनमें कमी है, इसलिए मैं कहता हूँ कि वे सम्पूर्ण आजादी नहीं चाहते। आर्थिक और प्रशासकीय दबाव डालकर वे चन्द और सुधार, यानी भारतीय पूँजीपतियों के लिए चन्द और रियायतें हासिल करना चाहेंगे। इसीलिए मैं कहता हूँ कि इस आन्दोलन का बेड़ा तो डूबेगा ही – शायद किसी न किसी समझौते या ऐसी किसी चीज के बिना ही। नवयुवक कार्यकर्ता, जो पूरी तनदेही से 'इन्कलाब ज़िन्दाबाद' के नारे लगाते हैं, स्वयं पूरी तरह संगठित नहीं हैं और अपना आन्दोलन आगे ले जाने की ताकत नहीं रखते हैं। वास्तव में पण्डित मोतीलाल नेहरू के सिवाय हमारे बड़े नेता कोई जिम्मेदारी नहीं लेना चाहते। यही कारण है कि वे हर बार गांधी के आगे बिना शर्त घुटने टेक देते हैं। अलग राय होने पर भी वे पूरे जोर से विरोध नहीं करते और गांधी के कारण प्रस्ताव पास कर दिए जाते हैं। ऐसी परिस्थितियों में, क्रान्ति के प्रति पूरी संजीदगी रखने वाले नौवजान कार्यकर्ताओं को मैं चेतावनी देना चाहता हूँ कि कठिन समय आ रहा है, वे चौकस रहें, हिम्मत न हारें और उलझनों में न फँसे। 'महान गांधी' के दो संघर्षों के अनुभवों के बाद हम आज की परिस्थिति व भविष्य के कार्यक्रम के बारे में स्पष्ट राय बना सकते हैं। अब मैं बिल्कुल सादे ढंग से यह केस

बताता हूँ। आप 'इन्कलाब-ज़िन्दाबाद' का नारा लगाते हो। मैं यह मानकर चलता हूँ कि आप इसका मतलब समझते हो। असेम्बली बम केस में दी गयी हमारी परिभाषा के अनुसार इन्कलाब का अर्थ मौजूदा सामाजिक ढाँचे में पूर्ण परिवर्तन और समाजवाद की स्थापना है। इस लक्ष्य के लिए हमारा पहला कदम ताकत हासिल करना है। वास्तव में 'राज्य', यानी सरकारी मशीनरी, शासक वर्ग के हाथों में अपने हितों की रक्षा करने और उन्हें आगे बढ़ाने का यंत्र ही है। हम इस यंत्र को छीनकर अपने आदर्शों की पूर्ति के लिए इस्तेमाल करना चाहते हैं। हमारा आदर्श है – नये ढंग से सामाजिक संरचना, यानी मार्क्सवादी ढंग से। इसी लक्ष्य के लिए हम सरकारी मशीनरी का इस्तेमाल करना चाहते हैं। जनता को लगातार शिक्षा देते रहना है ताकि अपने सामाजिक कार्यक्रम की पूर्ति के लिए अनुकूल व सुविधाजनक वातावरण बनाया जा सके। हम उन्हें संघर्षों के दौरान ही अच्छा प्रशिक्षण और शिक्षा दे सकते हैं।

इन बातों के बारे में स्पष्टता, यानी हमारे फौरी और अन्तिम लक्ष्य को स्पष्टता से समझने के बाद हम आज की परिस्थिति का विश्लेषण कर सकते हैं। किसी भी स्थिति का विश्लेषण करते समय हमें हमेशा बिल्कुल बेझिझक, बेलाग या व्यावहारिक होना चाहिए।

हम जानते हैं कि जब भारत सरकार में भारतीयों की हिस्सेदारी को लेकर हल्ला हुआ था तो मिण्टो-मार्ले सुधार लागू हुए थे, जिनके द्वारा केवल सलाह देने का अधिकार रखने वाली वायसराय-परिषद बनायी गयी थी।

विश्वयुद्ध के दौरान जब भारतीय सहायता की अत्यन्त आवश्यकता थी तो स्वायत्त-शासनवाली सरकार का वायदा किया गया और मौजूदा सुधार लागू किये गये। असेम्बली को कुछ सीमित कानून बनाने की ताकत दी गयी, लेकिन सब कुछ वायसराय की खुशी पर निर्भर है। अब तीसरी स्टेज है।

अब सुधारों-सम्बन्धी विचार हो रहा है और निकट भविष्य में ये लागू होंगे। अब नौजवान इनकी परीक्षा कैसे कर सकते हैं? यह एक सवाल है। मैं नहीं जानता कि कांग्रेसी नेता कैसे उनकी परख करेंगे? लेकिन हम क्रान्तिकारी इन्हें निम्नलिखित कसौटी पर परखेंगे –

1. किसी सीमा तक शासन की जिम्मेदारी भारतीयों को सौंपी जाती है?

2. शासन चलाने के लिए किस तरह की सरकार बनायी जाती है और सामान्य जनता को इसमें हिस्सा लेने का कहाँ तक अवसर मिलता है?

3. भविष्य में क्या सम्भावनाएँ हो सकती हैं और इन उपलब्धियों को किस प्रकार बचाया जा सकता है?

इसके लिए शायद कुछ और स्पष्टीकारण की जरूरत हो। पहली बात यह है कि हमारी जनता के प्रतिनिधियों को कार्यपालिका पर कितना अधिकार और जिम्मेदारी हासिल होती है। अब तक कार्यपालिका को लेजिस्लेटिव असेम्बली के सामने उत्तरदायी नहीं बनाया गया है। वायसराय के पास वीटो की ताकत है, जिससे चुने हुए प्रतिनिधियों की

सारी कोशिशें बेअसर और ठप्प कर दी जाती हैं।

हम स्वराज्य पार्टी के शुक्रगुजार हैं जिनकी कोशिशों से वायसराय ने अपनी इस ताकत का बड़ी बेशर्मी से बार-बार इस्तेमाल किया और राष्ट्रीय प्रतिनिधियों के मर्यादा भरे निर्णय पाँव तले कुचल दिये। यह बात पूरी तरह स्पष्ट है और इस पर और बहस की जरूरत नहीं है।

आइए, सबसे पहले कार्यकारिणी की स्थापना के ढंग पर विचार करें? क्या कार्यकारिणी को असेम्बली के चुने हुए सदस्य चुनते हैं या पहले की ही तरह ऊपर से थोपी जायेगी? क्या यह असेम्बली के आगे उत्तरदायी होगी या पहले की ही तरह असेम्बली का अपमान करेगी?

जहाँ तक दूसरी बात का सम्बन्ध है, उसे हम वयस्क मताधिकार की सम्भावना से देख सकते हैं। सम्पत्ति होने की धारा को पूरी तरह समाप्त कर व्यापक मताधिकार दिये जाने चाहिए। हर वयस्क स्त्री-पुरुष को वोट का अधिकार मिलना चाहिए। अब तो सिर्फ यह देख सकते हैं कि मताधिकार किस सीमा तक दिये जाते हैं।

जहाँ तक व्यवस्था का प्रश्न है, अभी दो सभाओं वाली सरकार है। मेरे ख्याल में उच्च सभा बुर्जुआ भ्रमजाल या बहकावे के अतिरिक्त कुछ नहीं। मेरी समझ से जहाँ तक उम्मीद की जा सके, एक सभा वाली सरकार अच्छी है।

यहाँ मैं प्रान्तीय स्वायत्तता के बारे में कुछ कहना चाहता हूँ। जो कुछ मैंने सुना है, उसके आधार पर मैं यह कह सकता हूँ कि ऊपर थोपा हुआ गवर्नर, जिसके पास असेम्बली से ऊपर विशेष अधिकार होंगे, तानाशाह से कम सिद्ध नहीं होगा। हम इसे प्रान्तीय स्वायत्तता न कहकर प्रान्तीय अत्याचार कहें। राज्य की संस्थाओं का यह अजीब लोकतान्त्रीकरण है।

तीसरी बात तो बिल्कुल स्पष्ट है। पिछले दो साल से अंग्रेज राजनीतिज्ञ उस वायदे को मिटाने में लगे हैं, जिसे मोंटेग्यू ने यह कह कर दिया था कि जब तक अंग्रेजी खजाने में दम है, प्रत्येक दस वर्ष पर और सुधार किये जाते रहेंगे।

हम देख सकते हैं कि उन्होंने भविष्य के लिए क्या फैसला किया है। मैं यह बात स्पष्ट कर दूं कि हम इन बातों का विश्लेषण इसलिए नहीं कर रहे कि उपलब्धियों पर जश्न मनाये जायें, वरन इसलिए कि जनता में जागृति लायी जा सके और उन्हें आनेवाले संघर्षों के लिए तैयार किया जा सके। हमारे लिए समझौता घुटने टेकना नहीं है, बल्कि एक कदम बढ़ाना और फिर कुछ आराम करना है।

लेकिन इसके साथ ही हमें यह भी समझ लेना चाहिए कि समझौता इससे अधिक कुछ और है भी नहीं। यह अन्तिम लक्ष्य और अन्तिम विश्राम की जगह नहीं है। वर्तमान परिस्थिति पर कुछ हद तक विचार करने के बाद भविष्य के कार्यक्रम और कार्यनीति पर भी विचार कर लिया जाये।

जैसाकि मैंने पहले भी कहा है कि किसी क्रान्तिकारी पार्टी के लिए निश्चित कार्यक्रम

होना बहुत जरूरी है। आपको यह पता होना चाहिए कि क्रान्ति का मतलब गतिविधि है। इसका मतलब संगठित व क्रमबद्ध काम द्वारा सोची-समझी तब्दीली लाना है और यह तोड़-फोड़ – असंगठित, एकदम या स्वतः परिवर्तन के विरुद्ध है। कार्यक्रम बनाने के लिए अनिवार्य रूप से इन बातों के अध्ययन की जरूरत है –

1. मंजिल (लक्ष्य) या उद्देश्य।

2. आधार, जहाँ से शुरू करना है, यानी वर्तमान परिस्थिति।

3. कार्यरूप, यानी साधन व दाँव-पेंच।

जब तक इन तत्वों के सम्बन्ध में कुछ स्पष्ट संकल्प नहीं है, तब तक कार्यक्रम-सम्बन्धी कोई विचार सम्भव नहीं।

वर्तमान परिस्थिति पर हम कुछ हद तक विचार कर चुके हैं, लक्ष्य-सम्बन्धी भी कुछ चर्चा हुई है। हम समाजवादी क्रान्ति चाहते हैं, जिसके लिए बुनियादी जरूरत राजनीतिक क्रान्ति की है। यही है जो हम चाहते हैं। राजनीतिक क्रान्ति का अर्थ राजसत्ता (यानी मोटे तौर पर ताकत) का अंग्रेजी हाथों में से भारतीय हाथों में आना है और वह भी उन भारतीयों के हाथों में, जिनका अन्तिम लक्ष्य हमारे लक्ष्य से मिलता हो। और स्पष्टता से कहें तो – राजसत्ता का सामान्य जनता की कोशिश से क्रान्तिकारी पार्टी के हाथों में आना। इसके बाद पूरी संजीदगी से पूरे समाज को समाजवादी दिशा में ले जाने के लिए जुट जाना होगा। यदि क्रान्ति से आपका यह अर्थ नहीं है तो महाशय, मेहरबानी करें और 'इन्कलाब ज़िन्दाबाद' के नारे लगाने बन्द कर दें। कम से कम हमारे लिए 'क्रान्ति' शब्द में बहुत ऊँचे विचार निहित हैं और इसका प्रयोग बिना संजीदगी के नहीं करना चाहिए, नहीं तो इसका दुरुपयोग होगा। लेकिन यदि आप कहते हैं कि आप राष्ट्रीय क्रान्ति चाहते हैं जिसका लक्ष्य भारतीय गणतन्त्र की स्थापना है तो मेरा प्रश्न यह है कि उसके लिए आप, क्रान्ति में सहायक होने के लिए, किन शक्तियों पर निर्भर कर रहे हैं? क्रान्ति राष्ट्रीय हो या समाजवादी, जिन शक्तियों पर हम निर्भर हो सकते हैं – वे हैं किसान और मजदूर। कांग्रेसी नेताओं में इन्हें संगठित करने की हिम्मत नहीं है, इस आन्दोलन में यह आपने स्पष्ट देख लिया है। किसी और से अधिक उन्हें इस बात का अहसास है कि इन शक्तियों के बिना वे विवश हैं। जब उन्होंने सम्पूर्ण आजादी का प्रस्ताव पास किया तो इसका अर्थ क्रान्ति ही था, पर इनका (कांग्रेस का) मतलब यह नहीं था। इसे नौजवान कार्यकर्ताओं के दबाव में पास किया गया था और इसका इस्तेमाल वे धमकी के रूप में करना चाहते थे, ताकि अपना मनचाहा डोमिनियन स्टेटस में हासिल कर सकें। आप कांग्रेस के पिछले तीनों अधिवेशनों के प्रस्ताव पढ़कर उस सम्बन्ध में ठीक राय बना सकते हैं। मेरा इशारा मद्रास, कलकत्ता व लाहौर अधिवेशनों की ओर है। कलकत्ता में डोमिनियन स्टेटस की माँग का प्रस्ताव पास किया गया। 12 महीने के भीतर इस माँग को स्वीकार करने के लिए कहा गया और यदि ऐसा न किया गया तो कांग्रेस मजबूर होकर पूर्ण आजादी को अपना उद्देश्य बना लेगी। पूरी संजीदगी से वे 31 दिसम्बर, 1929 की आधी रात तक इस तोहफे को प्राप्त करने का इंतजार करते रहे और तब उन्होंने पूर्ण आजादी का प्रस्ताव मानने के लिए स्वयं को 'वचनबद्ध' पाया, जो कि वे चाहते नहीं थे। और तब भी महात्मा जी ने यह बात छिपाकर नहीं रखी कि

बातचीत के दरवाजे खुले हैं। यह था इसका वास्तविक आशय। बिल्कुल शुरू से ही वे जानते थे कि उनके आन्दोलन का अन्त किसी न किसी तरह के समझौते में होगा। इस बेदिली से हम नफरत करते हैं न कि संघर्ष के किसी मसले पर समझौते से।

हम इस बात पर विचार कर रहे थे कि क्रान्ति किन-किन ताकतों पर निर्भर है? लेकिन यदि आप सोचते हैं कि किसानों और मजदूरों को सक्रिय हिस्सेदारी के लिए आप मना लेंगे तो मैं बताना चाहता हूँ वे कि किसी प्रकार की भावुक बातों से बेवकूफ नहीं बनाये जा सकते। वे साफ-साफ पूछेंगे कि उन्हें आपकी क्रान्ति से क्या लाभ होगा, वह क्रान्ति जिसके लिए आप उनके बलिदान की माँग कर रहे हैं। भारत सरकार का प्रमुख लार्ड रीडिंग की जगह यदि सर पुरुषोत्तम दास ठाकुर दास हो तो उन्हें (जनता को) इससे क्या फर्क पड़ता है? एक किसान को इससे क्या फर्क पड़ेगा, यदि लार्ड इरविन को जगह सर तेज बहादुर सप्रू आ जायें। राष्ट्रीय भावनाओं की अपील बिल्कुल बेकार हैं। उसे आप अपने काम के लिए 'इस्तेमाल' नहीं कर सकते। आपको गम्भीरता से काम लेना होगा और उन्हें समझाना होगा कि क्रान्ति उनके हित में है और उनकी अपनी है। सर्वहारा श्रमिक वर्ग की क्रान्ति, सर्वहारा के लिए।

जब आप अपने लक्ष्य के बारे में स्पष्ट अवधारणा बना लेंगे तो ऐसे उद्देश्य की पूर्ति के लिए आप अपनी शक्ति संजोने में जुट जायेंगे। अब दो अलग-अलग पड़ावों से गुजरना होगा – पहला तैयारी का पड़ाव, दूसरा उसे कार्यरूप देने का।

जब यह वर्तमान आन्दोलन खत्म होगा तो आप अनेक ईमानदार व गम्भीर क्रान्तिकारी कार्यकर्ताओं को निराश व उचाट पायेंगे। लेकिन आपको घबराने की जरूरत नहीं है। भावुकता एक ओर रखो। वास्तविकता का सामना करने के लिए तैयार होओ। क्रान्ति करना बहुत कठिन काम है। यह किसी एक आदमी की ताकत के वश की बात नहीं है और न ही यह किसी निश्चित तारीख को आ सकती है। यह तो विशेष सामाजिक-आर्थिक परिस्थितियों से पैदा होती है और एक संगठित पार्टी को ऐसे अवसर को सम्भालना होता है और जनता को इसके लिए तैयार करना होता है। क्रान्ति के दुस्साध्य कार्य के लिए सभी शक्तियों को संगठित करना होता है। इस सबके लिए क्रान्तिकारी कार्यकर्ताओं को अनेक कुर्बानियाँ देनी होती हैं। यहाँ मैं यह स्पष्ट कह दूं कि यदि आप व्यापारी हैं या सुस्थिर दुनियादार या पारिवारिक व्यक्ति हैं तो महाशय! इस आग से न खेलें। एक नेता के रूप में आप पार्टी के किसी काम के नहीं हैं। पहले ही हमारे पास ऐसे बहुत से नेता हैं जो शाम के समय भाषण देने के लिए कुछ वक्त जरूर निकाल लेते हैं। ये नेता हमारे किसी काम के नहीं हैं। हम तो लेनिन के अत्यन्त प्रिय शब्द 'पेशेवर क्रान्तिकारी' का प्रयोग करेंगे। पूरा समय देने वाले कार्यकर्ता, क्रान्ति के सिवाय जीवन में जिनकी और कोई ख्वाहिश ही न हो। जितने अधिक ऐसे कार्यकर्ता पार्टी में संगठित होंगे, उतने ही सफलता के अवसर अधिक होंगे।

पार्टी को ठीक ढंग से आगे बढ़ाने के लिए जिस बात की सबसे अधिक जरूरत है वह यह है कि ऐसे कार्यकर्ता स्पष्ट विचार, प्रत्यक्ष समझदारी, पहलकदमी की योग्यता और तुरन्त निर्णय कर सकने की शक्ति रखते हों। पार्टी में फौलादी अनुशासन होगा और यह जरूरी नहीं कि पार्टी भूमिगत रहकर ही काम करे, बल्कि इसके विपरीत खुले रूप में

काम कर सकती है, यद्यपि स्वेच्छा से जेल जाने की नीति पूरी तरह छोड़ दी जानी चाहिए। इस तरह बहुत से कार्यकर्ताओं को गुप्त रूप से काम करते जीवन बिताने की भी जरूरत पड़ सकती है, लेकिन उन्हें उसी तरह से पूरे उत्साह से काम करते रहना चाहिए और यही है वह ग्रुप जिससे अवसर सम्भाल सकने वाले नेता तैयार होंगे।

पार्टी को कार्यकर्ताओं की जरूरत होगी, जिन्हें नौजवानों के आन्दोलनों से भरती किया जा सकता है। इसीलिए नवयुवकों के आन्दोलन सबसे पहली मंजिल हैं, जहाँ से हमारा आन्दोलन शुरू होगा। युवक आन्दोलन को अध्ययन-केन्द्र(स्टडी सर्किल) खोलने चाहिए। लीफलेट, पैम्फलेट, पुस्तकें, मैगजीन छापने चाहिए। क्लासों में लेक्चर होने चाहिए। राजनीतिक कार्यकर्ताओं के लिए भरती करने और प्रशिक्षण देने की यह सबसे अच्छी जगह होगी।

उन नौजवानों को पार्टी में ले लेना चाहिए, जिनके विचार विकसित हो चुके हैं और वे अपना जीवन इस काम में लगाने के लिए तैयार हैं। – पार्टी कार्यकर्ता नवयुवक आन्दोलन के काम को दिशा देंगे। पार्टी अपना काम प्रचार से शुरू करेगी। यह अत्यन्त आवश्यक है। गदर पार्टी (1914-15) के असफल होने का मुख्य कारण था – जनता की अज्ञानता, लगावहीनता और कई बार विरोध। इसके अतिरिक्त किसानों और मजदूरों का सक्रिय समर्थन हासिल करने के लिए भी प्रचार जरूरी है। पार्टी का नाम कम्युनिस्ट पार्टी हो। ठोस अनुशासन वाली राजनीतिक कार्यकर्ताओं की यह पार्टी बाकी सभी आन्दोलन चलायेगी। इसे मजदूरों व किसानों की तथा अन्य पार्टियों का संचालन भी करना होगा और लेबर यूनियन कांग्रेस तथा इस तरह की अन्य राजनीतिक संस्थाओं पर प्रभावी होने की कोशिश भी पार्टी करेगी। पार्टी एक बड़ा प्रकाशन-अभियान चलायेगी जिससे राष्ट्रीय चेतना ही नहीं, वर्ग चेतना भी पैदा होगी। समाजवादी सिद्धान्तों के सम्बन्ध में जनता को सचेत बनाने के लिए सभी समस्याओं की विषयवस्तु प्रत्येक व्यक्ति की समझ में आनी चाहिए और ऐसे प्रकाशनों को बड़े पैमाने पर वितरित किया जाना चाहिए। लेखन सादा और स्पष्ट हो।

मजदूर आन्दोलन में ऐसे व्यक्ति हैं जो मजदूरों और किसानों की आर्थिक और राजनीतिक स्वतन्त्रता के बारे में बड़े अजीब विचार रखते हैं। ये लोग उत्तेजना फैलाने वाले हैं या बौखलाये हुए हैं। ऐसे विचार या तो ऊलजलूल हैं या कल्पनाहीन। हमारा मतलब जनता की आर्थिक स्वतन्त्रता से है और इसी के लिए हम राजनीतिक ताकत हासिल करना चाहते हैं। इसमें कोई सन्देह नहीं कि शुरू में छोटी-मोटी आर्थिक माँगों और इन वर्गों के विशेष अधिकारों के लिए हमें लड़ना होगा। यही संघर्ष उन्हें राजनीतिक ताकत हासिल करने के अन्तिम संघर्ष के लिए सचेत व तैयार करेगा।

इसके अतिरिक्त सैनिक विभाग संगठित करना होगा। यह बहुत महत्त्वपूर्ण है। कई बार इसकी बुरी तरह जरूरत होती है। उस समय शुरू करके आप ऐसा ग्रुप तैयार नहीं कर सकते जिसके पास काम करने की पूरी ताकत हो। शायद इस विषय को बारीकी से समझाना जरूरी है। इस विषय पर मेरे विचारों को गलत रंग दिये जाने की बहुत अधिक सम्भावना है। ऊपरी तौर पर मैंने एक आतंकवादी की तरह काम किया है, लेकिन मैं आतंकवादी नहीं हूँ। मैं एक क्रान्तिकारी हूँ, जिसके दीर्घकालिक कार्यक्रम-सम्बन्धी ठोस व

विशिष्ट विचार हैं जिन पर यहाँ विचार किया जा रहा है। 'शस्त्रों के साथी' मेरे कुछ साथी मुझे रामप्रसाद बिस्मिल की तरह इस बात के लिए दोषी ठहरायेंगे कि फाँसी की कोठरी में रहकर मेरे भीतर कुछ प्रतिक्रिया पैदा हुई है। इसमें कुछ भी सच्चाई नहीं है। मेरे विचार वही हैं, मुझमें वही दृढ़ता है और जो वही जोश व स्पिरिट मुझमें यहाँ है, जो बाहर थी – नहीं, उससे कुछ अधिक है। इसलिए अपने पाठकों को मैं चेतावनी देना चाहता हूँ कि मेरे शब्दों को वे पूरे ध्यान से पढ़ें।

उन्हें पंक्तियों के बीच कुछ भी नहीं देखना चाहिए। मैं अपनी पूरी ताकत से यह कहना चाहता हूँ कि क्रान्तिकारी जीवन के शुरू के चंद दिनों के सिवाय न तो मैं आतंकवादी हूँ और न ही था; और मुझे पूरा यकीन है कि इस तरह के तरीकों से हम कुछ भी हासिल नहीं कर सकते। हिन्दुस्तान समाजवादी रिपब्लिकन पार्टी के इतिहास से यह बिल्कुल स्पष्ट हो जाता है। हमारे सभी काम इसी दिशा में थे, यानी बड़े राष्ट्रीय आन्दोलन के सैनिक विभाग की जगह अपनी पहचान करवाना। यदि किसी ने मुझे गलत समझ लिया है तो वे सुधार कर लें। मेरा मतलब यह कदापि नहीं है कि बम व पिस्तौल बेकार हैं, वरन् इसके विपरीत, ये लाभदायक हैं। लेकिन मेरा मतलब यह जरूर है कि केवल बम फेंकना न सिर्फ बेकार, बल्कि नुकसानदायक है। पार्टी के सैनिक विभाग को हमेशा तैयार रहना चाहिए, ताकि संकट के समय काम आ सके। इसे पार्टी के राजनीतिक काम में सहायक के रूप में होना चाहिए। यह अपने आप स्वतन्त्र काम न करे।

जैसे ऊपर इन पंक्तियों में बताया गया है, पार्टी अपने काम को आगे बढ़ाये। समय-समय पर मीटिंगें और सम्मेलन बुलाकर अपने कार्यकर्ताओं को सभी विषयों के बारे में सूचनाएं और सजगता देते रहना चाहिए। यदि आप इस तरह से काम शुरू कराते हैं तो आपको काफी गम्भीरता से काम लेना होगा। इस काम को पूरा होने में कम से कम बीस साल लगेंगे। क्रान्ति-सम्बन्धी यौवन काल के दस साल में पूरे होने के सपनों को एक ओर रख दें, ठीक वैसे ही जैसे गांधी के (एक साल में स्वराज के) सपने को परे रख दिया था। न तो इसके लिए भावुक होने की जरूरत है और न ही यह सरल है। जरूरत है निरन्तर संघर्ष करने, कष्ट सहने और कुर्बानी भरा जीवन बिताने की। अपना व्यक्तिवाद पहले खत्म करो। व्यक्तिगत सुख के सपने उतारकर एक ओर रख दो और फिर काम शुरू करो। इंच-इंच कर आप आगे बढ़ेंगे। इसके लिए, हिम्मत, दृढ़ता और बहुत मजबूत इरादे की जरूरत है। कितने ही भारी कष्ट, कठिनाइयाँ क्यों न हों, आपकी हिम्मत न काँपे। कोई भी पराजय या धोखा आपका दिल न तोड़ सके। कितने भी कष्ट क्यों न आयें, आपका क्रान्तिकारी जोश ठण्डा न पड़े। कष्ट सहने और कुर्बानी करने के सिद्धान्त से आप सफलता हासिल करेंगे और यह व्यक्तिगत सफलताएँ क्रान्ति की अमूल्य सम्पत्ति होगीं।

इन्कलाब - ज़िन्दाबाद!
2 फरवरी, 1931

हमारे लिए सुनहरा अवसर

भारत की स्वतन्त्रता अब शायद दूर का स्वप्न नहीं रहा। घटनाएँ बड़ी तेजी से घट रही हैं इसलिए स्वतन्त्रता अब हमारी आशाओं से भी जल्द ही एक सच्चाई बन जाएगी। ब्रिटिश साम्राज्य बुरी तरह लड़खड़ाया हुआ है। जर्मनी को मुंह की खानी पड़ रही है, फ्रांस थर-थर काँप रहा है और अमेरिका हिला हुआ है और इन सबकी कठिनाइयाँ हमारे लिए सुनहरा अवसर हैं। प्रत्येक चीज उस महान भविष्यवाणी की ओर संकेत कर रही है, जिसके अनुसार समाज का पूँजीवादी ढाँचा नष्ट होना अटल है। कूटनीतिज्ञ लोग स्वयं को बचाने के लिए प्रयत्नशील हो सकते हैं और पूँजीवादी षडयन्त्र से 'क्रान्ति के बाघ' को अपने घर से दूर रखने की कोशिशें कर सकते हैं। अंग्रेजों का बजट सन्तुलित हो सकता है और मृत्यु के मुँह में पड़े पूँजीवाद को कुछ पलों की राहत मिल सकती है। 'डालर राजा' चाहे अपना ताज संभाल ले तो भी व्यापक मंदी यदि जारी रही और जिसका जारी रहना लाजिमी है, तो बेरोजगारों की फौज तेजी से बढ़ेगी और यह बढ़ भी रही है, क्योंकि पूँजीवादी उत्पादन-व्यवस्था ही ऐसी है। यह चक्कर पूँजीवादी व्यवस्था को पटरी से उतार देगा। बस, बात कुछ महीनों की ही है। इसलिए क्रान्ति अब भविष्यवाणी या सम्भावना नहीं, वरन् 'व्यावहारिक राजनीति' है जिसे सोची-समझी योजना और कठोर अमल से सफल बनाया जा सकता है। इसके विभिन्न पहलुओं और तात्पर्य, इसके तरीकों और उद्देश्यों-सम्बन्धी कोई विचारधारात्मक उलझन नहीं होनी चाहिए।

गांधीवाद

कांग्रेस आन्दोलन की सम्भावनाओं, पराजयों और उपलब्धियों के बारे में हमें किसी प्रकार का भ्रम नहीं होना चाहिए। आज चल रहे इस आन्दोलन को गांधीवाद कहना ही उचित है। यह दावे के साथ आजादी के लिए स्टैण्ड नहीं लेता, बल्कि सत्ता में 'हिस्सेदारी' के पक्ष में है। 'पूर्ण स्वतंत्राता' के अजीब अर्थ निकाले जा रहे हैं, इसका तरीका अनूठा है, लेकिन बेचारे लोगों के किसी काम का नहीं है। साबरमती के सन्त को गांधीवाद कोई स्थायी शिष्य नहीं दे पायेगा। यह एक बीच की पार्टी-यानी लिबरल-रैडिकल मेल-जोल, का काम कर रही है और करती भी रही है। मौके की असलियत से टकराने में इसे शर्म आती है। इसे चलाने वाले देश के ऐसे ही लोग हैं जिनके हित इससे बँधे हुए हैं और वे अपने हितों के लिए बुर्जुआ हठ से चिपके हुए हैं। यदि क्रान्तिकारी रक्त से इसे गर्मजोशी न दी गयी तो इसका ठण्डा होना लाजिमी है। इसे इसी के दोस्तों से बचाने की जरूरत है।

आतंकवाद

आइए, हम इस कठिन सवाल के बारे में स्पष्ट हों। बम का रास्ता 1905 से चला आ रहा है और क्रान्तिकारी भारत पर यह एक दर्दनाक टिप्पणी है। अभी यह महसूस नहीं किया गया कि इसका उपयोग व दुरुपयोग क्या है। आतंकवाद हमारे समाज में क्रान्तिकारी चिन्तन की पकड़ के अभाव की अभिव्यक्ति है; या एक पछतावा। इसी

तरह ये अपनी असफलता का स्वीकार भी है। शुरू-शुरू में इसका कुछ लाभ था। इसने राजनीति को आमूल बदल दिया। नवयुवक बुद्धिजीवियों की सोच को चमकाया, आत्म-त्याग की भावना को ज्वलन्त रूप दिया और दुनिया व अपने दुश्मनों के सामने अपने आन्दोलन की सच्चाई और शक्ति को जाहिर करने का अवसर मिला। लेकिन यह स्वयं में पर्याप्त नहीं है। सभी देशों में इसका (आतंकवाद का) इतिहास असफलता का इतिहास है – फ्रांस, रूस, जर्मनी में, बाल्कन देशों, स्पेन में – हर जगह इसकी यही कहानी है। इसकी पराजय के बीज इसके भीतर ही होते हैं। साम्राज्यवादियों को अच्छी तरह पता है कि 30 करोड़ लोगों पर शासन के लिए प्रति वर्ष 30 व्यक्तियों की बलि दी जा सकती है। शासन करने का स्वाद बमों या पिस्तौलों से किरकिरा तो किया जा सकता है, लेकिन शोषण के व्यावहारिक लाभ उसे बनाये रखने पर विवश करेंगे। भले ही हमारी उम्मीद के अनुसार हथियार आसानी से मिल जायें और यदि हम पूरे जोर से लड़ें, जैसा कि इतिहास में पहले कभी न घटा हो, तो भी आतंकवाद अधिक-से-अधिक साम्राज्यवादी ताकत को समझौते के लिए ही मजबूर कर सकता है। ऐसे समझौते, हमारे उद्देश्य-पूर्ण आजादी-से हमेशा ही कहीं दूर रहेंगे। इस प्रकार आतंकवाद, एक समझौता, सुधारों की एक किश्त निचोड़कर निकाल सकता है और इसे ही हासिल करने के लिए गांधीवाद जोर लगा रहा है। वह चाहता है कि दिल्ली का शासन गोरे हाथों से भूरे हाथों में आ जाये। यह लोगों के जीवन से दूर हैं और इनके गद्दी पर बैठते ही जालिम बन जाने की बहुत सम्भावनाएँ हैं। आयरिश उदाहरण यहाँ लागू नहीं होगा, यह चेतावनी मैं देना चाहता हूँ। आयरलैण्ड में इक्की-दुक्की आतंकवादी कार्रवाइयाँ नहीं थीं, बल्कि यह राष्ट्रीय स्तर पर जनसाधारण की बगावत थी, जिसमें बन्दूकधारी अपनी नजदीकी जानकारी और हमदर्दी से लोगों से जुड़ा हुआ था। उन्हें बड़ी आसानी से हथियार मिल जाते थे, क्योंकि अमेरिकी आयरिश उन्हें अथाह आर्थिक मदद दे रहे थे। भौगोलिक स्थिति भी ऐसे युद्ध के लिए लाभदायक थी। लेकिन तो भी आयरलैण्ड को अपने आन्दोलन के अपूर्ण उद्देश्यों के साथ ही सन्तोष करना पड़ा। इसने आयरिश जनता की गुलामी तो कम की है, लेकिन आयरिश श्रमिक वर्ग को पूँजीपतियों के जंजाल से मुक्त नहीं करवाया। भारत को आयरलैण्ड से सीखना है। यह एक चेतावनी भी है कि किस प्रकार क्रान्तिकारी सामाजिक आधार से खाली राष्ट्रवादी आदर्शवाद, हालात के साजगार होने पर भी साम्राज्यवाद से समझौते की रेत में गुम हो सकता है। क्या भारत को अभी भी आयरलैण्ड की नकल करनी चाहिए-यदि वह की भी जा सके, तो भी?

एक प्रकार से गांधीवाद अपना भाग्यवाद का विचार रखते हुए भी, क्रान्तिकारी विचारों के कुछ नजदीक पहुँचने का यतन करता है, क्योंकि यह सामूहिक कार्रवाई पर निर्भर करता है, यद्यपि यह कार्रवाई समूह के लिए नहीं होती। उन्होंने मजदूरों को आन्दोलन में भागीदार बनाकर उन्हें मजदूर-क्रान्ति के रास्ते पर डाल दिया है। यह बात अलग है कि उन्हें कितनी असभ्यता या स्वार्थ से अपने राजनीतिक कार्यक्रम के लिए इस्तेमाल किया गया है। क्रान्तिकारियों को 'अहिंसा के फरिश्ते' को उसका योग्य स्थान देना चाहिए।

आतंकवाद के शैतान को दाद देने की जरूरत नहीं है। आतंकवादियों ने काफी काम कर लिया है, काफी कुछ सिखा दिया है। यदि हम अपने उद्देश्यों और तरीकों सम्बन्धी

भूलें न करें तो यह अभी भी कुछ लाभप्रद हो सकता है। विशेषतः निराशा के समय आतंकवादी तरीका हमारे प्रचार-अभियान में सहायक हो सकता है, लेकिन यह पटाखेबाजी के सिवाय है कुछ नहीं और इसे विशेष समय और कुछ गिने-चुने लोगों के लिए सुरक्षित रखना चाहिए। क्रान्तिकारी को निरर्थक आतंकवादी कार्रवाइयों और व्यक्तिगत आत्म-बलिदान के दूषित चक्र में न डाला जाये। सभी के लिए उत्साहवर्द्धक आदर्श, उद्देश्य के लिए मरना न होकर उद्देश्य के लिए जीना – और वह भी लाभदायक तरीके से योग्य रूप में जीना-होना चाहिए।

यह कहने की तो कोई जरूरत नहीं है कि हम आतंकवाद से पूरी तरह सम्बन्ध नहीं तोड़ रहे। हम श्रमिक क्रान्ति के दृष्टिकोण से इसका पूरे तौर पर मूल्यांकन चाहते हैं। जो नवयुवक परिपक्व व चुपचाप (तरीके से) संगठन के काम में फिट नहीं होते, उनकी दूसरी भूमिका हो सकती है। उन्हें नीरस कामों से मुक्त कर अपनी इच्छा पूरी करने के लिए छोड़ देना चाहिए। लेकिन संचालक संस्था को पार्टी और उस काम के प्रभाव को, लोगों पर उसके प्रभाव और दुश्मन की ताकत को पहले ही देखना चाहिए। ऐसे काम पार्टी और जनता का ध्यान जुझारू जनसंघर्ष से हटाकर तेज भड़कीले कामों केा ओर लगा सकते हैं और इस प्रकार पार्टी की जड़ों पर प्रहार करने का बहाना बन सकता है। इस प्रकार किसी भी स्थिति में इस आदर्श को आगे नहीं बढ़ाना है।

लेकिन गुप्त सैनिक विभाग कोई श्रापग्रस्त चीज नहीं है। वास्तव में यह तो अग्रिम पंक्ति है। क्रान्तिकारी पार्टी की 'गोलीमार पंक्ति' 'आधार' से पूरी तरह जुड़ी होनी चाहिए। 'आधार' जुझारू व गतिशील जन-पार्टी को बनना है। संगठन के लिए धन और हथियार संग्रह करने में कोई झिझक नहीं होनी चाहिए।

क्रान्ति

क्रान्ति से हमारा क्या आशय है, यह स्पष्ट है। इस शताब्दी में इसका सिर्फ एक ही अर्थ हो सकता है – जनता के लिए जनता का राजनीतिक शक्ति हासिल करना। वास्तव में यही है 'क्रान्ति', बाकी सभी विद्रोह तो सिर्फ मालिकों के परिवर्तन द्वारा पूँजीवादी सड़ाँध को ही आगे बढ़ाते हैं। किसी भी हद तक लोगों से या उनके उद्देश्यों से जतायी हमदर्दी जनता से वास्तविकता नहीं छिपा सकती, लोग छल को पहचानते हैं। भारत में हम भारतीय श्रमिक के शासन से कम कुछ नहीं चाहते। भारतीय श्रमिकों को – भारत में साम्राज्यवादियों और उनके मददगार हटाकर जो कि उसी आर्थिक व्यवस्था के पैरोकार हैं, जिसकी जड़ें, शोषण पर आधारित हैं – आगे आना है। हम गोरी बुराई की जगह काली बुराई को लाकर कष्ट नहीं उठाना चाहते। बुराइयाँ, एक स्वार्थी समूह की तरह, एक-दूसरे का स्थान लेने के लिए तैयार हैं।

साम्राज्यवादियों को गद्दी से उतारने के लिए भारत का एकमात्र हथियार श्रमिक क्रान्ति है। कोई और चीज इस उद्देश्य को पूरा नहीं कर सकती। सभी विचारों वाले राष्ट्रवादी एक उद्देश्य पर सहमत हैं कि साम्राज्यवादियों से आजादी हासिल हो। पर उन्हें यह समझाने की भी जरूरत है कि उनके आन्दोलन की चालक शक्ति विद्रोही जनता है और उसकी

जुझारू कार्रवाईयों से ही सफलता हासिल होगी। चूँकि इसका सरल समाधान नहीं हो सकता, इसलिए स्वयं को छलकर वे उस ओर लपकते हैं, जिसे वे आरजी इलाज, लेकिन झटपट और प्रभावशाली मानते हैं – अर्थात् चन्द सैकड़े दृढ़ आदर्शवादी राष्ट्रवादियों के सशक्त विद्रोह के जरिए विदेशी शासन को पलटकर राज्य का समाजवादी रास्ते पर पुनर्गठन। उन्हें समय की वास्तविकता में झाँककर देखना चाहिए। हथियार बड़ी संख्या में प्राप्त नहीं हैं और जुझारू जनता से अलग होकर अशिक्षित गुट की बगावत की सफलता का इस युग में कोई चांस नहीं है। राष्ट्रवादियों की सफलता के लिए उनकी पूरी कौम को हरकत में आना चाहिए और बगावत के लिए खड़ा होना चाहिए। कौम कांग्रेस के लाउडस्पीकर नहीं हैं, वरन् वे मजदूर-किसान हैं जो भारत की 95 प्रतिशत जनसंख्या है। राष्ट्र स्वयं को राष्ट्रवाद के विश्वास पर ही हरकत में लायेगा, यानी साम्राज्यवाद और पूँजीपति की गुलामी से मुक्ति का विश्वास दिलाने से।

हमें याद रखना चाहिए कि श्रमिक क्रान्ति के अतिरिक्त न किसी और क्रान्ति की इच्छा करनी चाहिए और न ही वह सफल हो सकती है।

कार्यक्रम

क्रान्ति का स्पष्ट और ईमानदार कार्यक्रम होना समय की जरूरत है और इस कार्यक्रम को लागू करने के लिए मजबूत कार्रवाई होनी चाहिए।

1917 में अक्टूबर क्रान्ति से पूर्व, जब लेनिन अभी मास्को में भूमिगत थे तो उन्होंने सफल क्रान्ति के लिए तीन जरूरी शर्तें बतायी थीं –

1. राजनीतिक-आर्थिक परिस्थिति।

2. जनता के मन में विद्रोह-भावना।

3. एक क्रान्तिकारी पार्टी, जो पूरी तरह प्रशिक्षित हो और परीक्षा के समय जनता को नेतृत्व प्रदान कर सके।

भारत में पहली शर्त पूरी हो चुकी है, दूसरी वह तीसरी शर्त अन्तिम रूप में अपनी पूर्ति की प्रतीक्षा कर रही हैं। इसके लिए हरकत में आना आजादी के सभी सेवकों का पहला काम है। इसी मुद्दे को सामने रखकर कार्यक्रम बनाया जाना चाहिए। इसकी रूपरेखा नीचे दी जा रही है और उसके प्रत्येक अनुभाग-सम्बन्धी सुझाव अनुसूची 'क' व 'ख' में दर्ज हैं –

बुनियादी काम

कार्यकर्ताओं के सामने सबसे पहली जिम्मेदारी है जनता को जुझारू काम के लिए तैयार व लामबन्द करना। हमें अन्धविश्वासों, भावनाओं, धार्मिकता या तटस्थता के

आदर्शों से खेलने की जरूरत नहीं है। हमें जनता से सिर्फ प्याज के साथ रोटी का वायदा ही नहीं करना। ये वायदे सम्पूर्ण व ठोस होंगे और इन पर हम ईमानदारी और स्पष्टता से बात करेंगे। हम कभी भी उनके मन में भ्रमों का जमघट नहीं बनने देंगे। क्रान्ति जनता के लिए होगी। कुछ स्पष्ट निर्देश यह होंगे –

1. सामन्तवाद की समाप्ति।

2. किसानों के कर्ज़े समाप्त करना।

3. क्रान्तिकारी राज्य की ओर से भूमि का राष्ट्रीयकरण ताकि सुधरी हुई व साझी खेती स्थापित की जा सके।

4. रहने के लिए आवास की गारण्टी।

5. किसानों से लिए जाने वाले सभी खर्च बन्द करना। सिर्फ इकहरा भूमि-कर लिया जायेगा।

6. कारखानों का राष्ट्रीयकरण और देश में कारखाने लगाना।

7. आम शिक्षा।

8. काम करने के घण्टे जरूरत के अनुसार कम करना।

जनता ऐसे कार्यक्रम के लिए जरूर हामी भरेगी। इस समय सबसे जरूरी काम यही है कि हम लोगों तक पहुँचें। थोपी हुई अज्ञानता ने एक ओर से और बुद्धिजीवियों की उदासीनता ने दूसरी ओर से – शिक्षित क्रान्तिकारियों और हथौड़े-दराँत वाले उनके अभागे अर्धशिक्षित साथियों के बीच एक बनावटी दीवार खड़ी कर दी है। क्रान्तिकारियों को इस दीवार को अवश्य ही गिराना है। इसके लिए निम्न काम जरूरी हैं –

1. कांग्रेस के मंच का लाभ उठाना।

2. ट्रेड यूनियनों पर कब्जा करना और नयी ट्रेड यूनियनों व संगठनों को जुझारू रूप में स्थापित करना।

3. राज्यों में यूनियनें बनाकर उन्हें उपरोक्त बातों के आधार पर संगठित करना।

4. प्रत्येक सामाजिक व स्वयंसेवी संगठनों में (यहाँ तक कि सहकारिता सोसायटियों), जिनसे जनता तक पहुँचने का अवसर मिलता है, गुप्त रूप से दाखिल होकर इनकी कार्रवाइयों को इस रूप में चलाना कि असल मुद्दे और उद्देश्यों को आगे बढ़ाया जा सके।

5. दस्तकारों की समितियाँ, मजदूरों और बौद्धिक काम करने वालों की यूनियनें हर जगह स्थापित की जायें।

ये कुछ रास्ते हैं जिनसे पढ़े-लिखे, प्रशिक्षित क्रान्तिकारी लोगों तक पहुँच सकते हैं। और एक बार पहुँच जायें तो प्रशिक्षण के जरिये पहले तो अपने अधिकारों की उत्साहपूर्वक पुष्टि कर सकते हैं और फिर हड़तालों और काम रोकने के तरीकों से जुझारू हल निकाल सकते हैं।

क्रान्तिकारी पार्टी

क्रान्तिकारियों के सक्रिय ग्रुप की मुख्य जिम्मेदारी, जनता तक पहुँचने और उन्हें सक्रिय बनाने की तैयारी में होती है। यही हैं वे चलते-फिरते दृढ़ इरादों के लोग जो राष्ट्र को जुझारू जीवनी शक्ति देंगे। ज्यों-ज्यों परिस्थितियाँ पकती हैं तो इन्हीं क्रान्तिकारी बुद्धिजीवियों-जो बुर्जुआ व पेटी बुर्जुआ वर्ग से आते हैं और कुछ समय तक इसी वर्ग से आते भी रहेंगे, लेकिन जिन्होंने स्वयं को इस वर्ग की परम्पराओं से अलग कर लिया होता है – से क्रान्तिकारी पार्टी बनेगी और फिर इसके गिर्द अधिक से अधिक सक्रिय मजदूर-किसान और छोटे दस्तकार राजनीतिक कार्यकर्ता जुड़ते रहेंगे। लेकिन मुख्य तौर पर यह क्रान्तिकारी बुद्धिजीवियों, स्त्रियों व पुरुषों की पार्टी होगी, जिनकी मुख्य जिम्मेदारी यह होगी कि वे योजना बनायें, फिर उसे लागू करें, प्रोपेगण्डा या प्रचार करें, अलग-अलग यूनियनों में काम शुरू कर उनमें एकजुटता लायें, उनके एकजुट हमले की योजना बनायें, सेना व पुलिस को क्रान्ति-समर्थक बनायें और उनकी सहायता या अपनी अन्य शक्तियों से विद्रोह या आक्रमण की शक्ल में क्रान्तिकारी टकराव की स्थिति बनायें, लोगों को विद्रोह के लिए प्रयत्नशील करें और समय पड़ने पर निर्भीकता से नेतृत्व दे सकें।

वास्तव में वही आन्दोलन का दिमाग हैं। इसीलिए उन्हें दृढ़ चरित्र की जरूरत होगी, यानी पहलकदमी और क्रान्तिकारी नेतृत्व की क्षमता। उनकी समझ राजनीतिक, आर्थिक और ऐतिहासिक समस्याओं, सामाजिक रुझानों, प्रगतिशील विज्ञान, युद्ध के नये वैज्ञानिक तरीकों और उसकी कला आदि के अनुशासित भाव से किये गये गहरे अध्ययन पर आधारित होनी चाहिए। क्रान्ति का बौद्धिक पक्ष हमेशा दुर्बल रहा है, इसलिए क्रान्ति की अत्यावश्यक चीजों और किये कामों के प्रभाव पर ध्यान नहीं दिया जाता रहा। इसलिए एक क्रान्तिकारी को अध्ययन-मनन अपनी पवित्र जिम्मेदारी बना लेना चाहिए।

यह तो स्पष्ट है कि पार्टी कुछ विशेष मामलों में खुले रूप में काम कर सकती है। जहाँ तक सम्भव हो, पार्टी को गुप्त नहीं होना चाहिए। इससे सन्देह नहीं रहेंगे और पार्टी को शक्ति और प्रतिष्ठा मिलेगी। पार्टी को बहुत बड़ी जिम्मेदारी उठानी होगी, इसलिए सुविधा की दृष्टि से पार्टी को कुछ समितियों में बाँटा जा सकता है जो प्रत्येक क्षेत्र के लिए विशेष कामों की देखभाल करेंगी। काम का यह विभाजन समय की आवश्यकता के अनुसार लचीला होना चाहिए या सदस्य की सम्भावनाएँ आँककर उसे किसी स्थानीय समिति में काम दिया जा सकता है। स्थानीय समिति, प्रान्तीय बोर्ड के अधीन होगी व बोर्ड सुप्रीम कौंसिल के अधीन। प्रान्त के भीतर सम्पर्क का काम प्रान्तीय बोर्ड के अधीन होगा। बिखरे-बिखरे सभी कामों या बिखराने वाले तत्वों को रोकना चाहिए, लेकिन अधिक केन्द्रीयकरण की सम्भावना नहीं है, इसलिए उसकी अभी कोशिश भी नहीं करनी चाहिए।

सभी स्थानीय समितियों को एक दूसरे से सम्पर्क रखते हुए काम करने चाहिए और समिति में एक सदस्य भी होना चाहिए। समिति छोटी, संयुक्त व कुशल हो और इसे वाद-विवाद-क्लब में पतित नहीं होने देना चाहिए।

इसलिए प्रत्येक क्षेत्र में क्रान्तिकारी पार्टी इस तरह हो –

(क) सामान्य समिति: भर्ती करना, सेना में प्रचार, सामान्य नीति, संगठन, जन-संगठनों में सम्पर्क-(परिशिष्ट क)।

(ख) वित्त समिति: समिति में महिला सदस्यों की संख्या अधिक हो सकती है। इस समिति के सिर पर सबसे मुश्किल कामों से भी मुश्किल काम है, इसलिए सभी को खुले दिल से इसकी सहायता करनी चाहिए। धन के स्रोत प्राथमिकता के अनुसार हों – स्वैच्छिक चन्दा, जबरी चन्दा (सरकारी धन), विदेशी पूँजीपति या बैंक, विदेश में रहने वालों की देशी व्यक्तिगत सम्पत्ति पर कब्जा या गैरकानूनी तरीके, जैसे गबन। (अन्तिम दोनों हमारी नीति के विपरीत हैं और पार्टी को हानि पहुँचाते हैं, इसलिए इन्हें अधिक बढ़ावा नहीं देना चाहिए।)

(ग) ऐक्शन कमेटी (कार्रवाई समिति): इसका रूप – साबोताज, हथियार-संग्रह और विद्रोह का प्रशिक्षण देने के लिए एक गुप्त समिति।

ग्रुप (क) – नवयुवक: शत्रु की खबरें एकत्रा करना, स्थानीय सैनिक-सर्वेक्षण।

ग्रुप (ख) – विशेषज्ञ: शस्त्र संग्रह, सैनिक-प्रशिक्षण आदि।

(घ) स्त्री-समिति: यद्यपि जाहिरा तौर पर स्त्री-पुरुषों में कोई भेदभाव नहीं रखा जाता तथापि पार्टी को सुरक्षा व सुविधा के लिए ऐसी समिति की जरूरत है जो अपने सदस्यों की पूरी जिम्मेदारी ओढ़ सके। उन्हें वित्त समिति का पूरा भार सौंपा जा सकता है और काफी हद तक सामान्य समिति के काम भी दिये जा सकते हैं – स्त्रियों को क्रान्तिकारी बनाना और इनमें से प्रत्यक्ष सेवा के लिए सक्रिय सदस्य भर्ती करना।

ऊपर बताये गये कार्यक्रम से यह निष्कर्ष निकालना सम्भव है कि क्रान्ति या आजादी के लिए कोई छोटा रास्ता नहीं है। 'यह किसी सुन्दरी की तरह सुबह-सुबह हमें दिखायी नहीं देगी' और यदि ऐसा हुआ तो वह बड़ा मनहूस दिन होगा। बिना किसी बुनियादी काम के, बगैर जुझारू जनता के और बिना किसी पार्टी के, अगर (क्रान्ति) हर तरह से तैयार हो, तो यह एक असफलता होगी। इसीलिए हमें स्वयं को झिंझोड़ना होगा। हमें हमेशा यह याद रखना चाहिए कि पूँजीवादी व्यवस्था चरमरा रही है और तबाही की ओर बढ़ रही है। दो या तीन साल में शायद इसका विनाश हो जाये। यदि आज भी हमारी शक्ति बिखरी रही और क्रान्तिकारी शक्तियाँ एकजुट होकर न बढ़ सकीं तो ऐसा संकट आयेगा कि हम उसे सम्भालने के लिए तैयार नहीं होंगे। आइए, हम यह चेतावनी स्वीकार करें और दो या तीन वर्ष में क्रान्ति की ओर आगे बढ़ने की योजना बनाएं।

फरवरी, 1931

आभार : यह फाइल आरोही, ए-2/128, सैक्टर-11, रोहिणी, नई दिल्ली – 110085 द्वारा प्रकाशित संकलन 'इन्कलाब ज़िन्दाबाद' (सम्पादक : राजेश उपाध्याय एवं मुकेश मानस) के मूल फाइल से ली गयी है।

Date Written: February 1931
Author: Bhagat Singh
Title: Draft of the Revolutionary Programme (Krantikari karyakram ka maswida)
Source: Found in various forms, this article appeared, in shortened forms in Peoples, Lahore on July 29, 1931 and Abyuday, Allahabad May 8, 1931. Found attached with the secret note of a CID offices of 1936. Original title was 'Letter to the young political workers'. This is the Hindi translation of complete document.

* **Courtesy**: This file has been taken from original file of Aarohi Books' publication Inquilab Zindadad-A Collection of Essays by Bhagat Singh and his friends, edited by Rajesh Upadhyaya and Mukesh Manas.

भगतसिंह